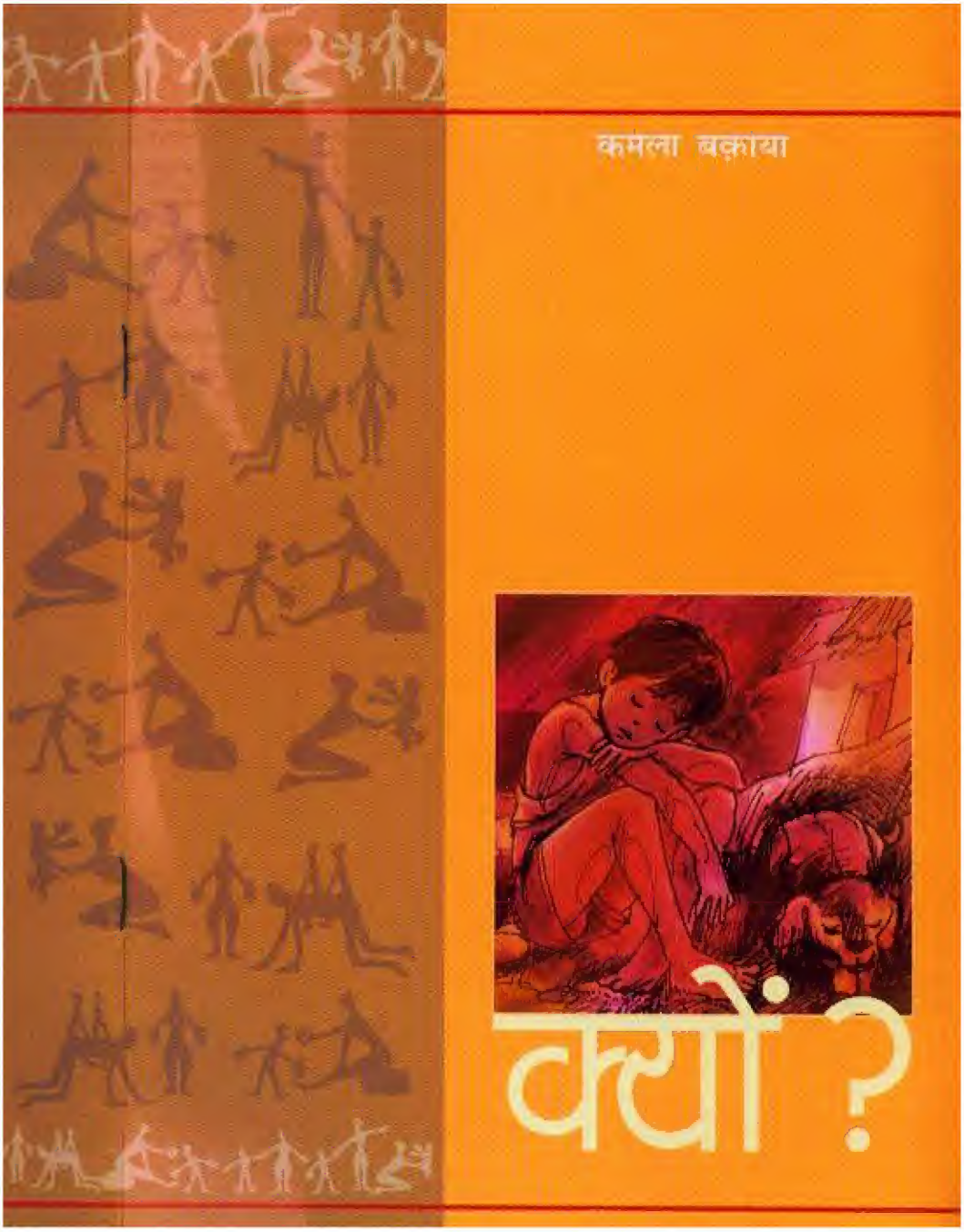

कमला बक़ाया

क्यों ?

क्यों?

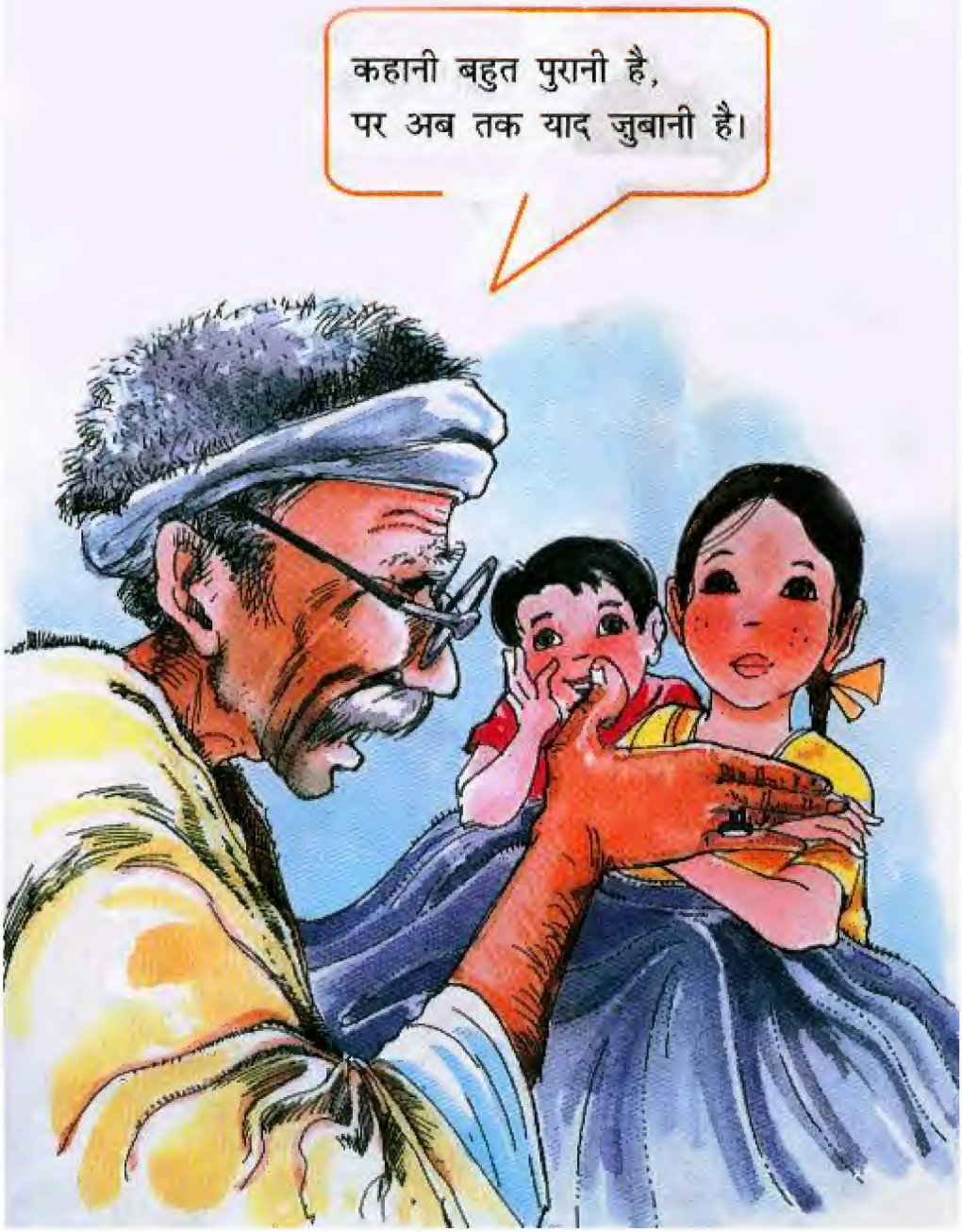

इक छोटा-सा घर कच्चा था,
उसमें माँ थी, इक बच्चा था।

बिन बाप मड़ैया सूनी थी,
औ' माँ पर मेहनत दूनी थी।

यह बच्चा बड़ा हुआ ज्यों-ज्यों,
हर बात पे पूछा करता, "क्यों?"

है बाप नहीं मेरा–पर क्यों?
दिन-रात अंधेरा है घर क्यों?

इतनी है हमें ग़रीबी क्यों?
और साथ में मोटी बीबी क्यों?

बहुतेरा माँ समझाती थी,
हर तरह उसे फुसलाती थी,

पर बच्चा हठ्ठी बच्चा था,
और आन का अपनी सच्चा था।

यह आदत बनी रही ज्यों-त्यों,
हर बात पे पूछा करता, "क्यों?"

माँ ने कुछ काम सँभाला था,
रो-धोकर उसको पाला था।

फिर वह भी उसको छोड़ गई,
दुनिया से नाता तोड़ गई।

बच्चे को अब घर-बार नहीं,
माँ की ममता और प्यार नहीं।

बस रैन-बसेरा सड़कों पे,
और साँझ-सबेरा सड़कों पे।

वह हर दम पूछा करता, "क्यों?"
दुनिया में कोई मरता क्यों?

यूँ फंदे कसे ग़रीबी के,
घर पहुँचा मोटी बीबी के।

घर क्या था बड़ी हवेली थी,
पर बीबी यहाँ अकेली थी।

गो नौकर भी बहुतेरे थे,
घर इनके अलग अंधेरे थे।

बच्चे को बान पुरानी थी,
कुछ बचपन था, नादानी थी।

पूछा—यह बड़ी हवेली क्यों?
औ' बीबी यहाँ अकेली क्यों?

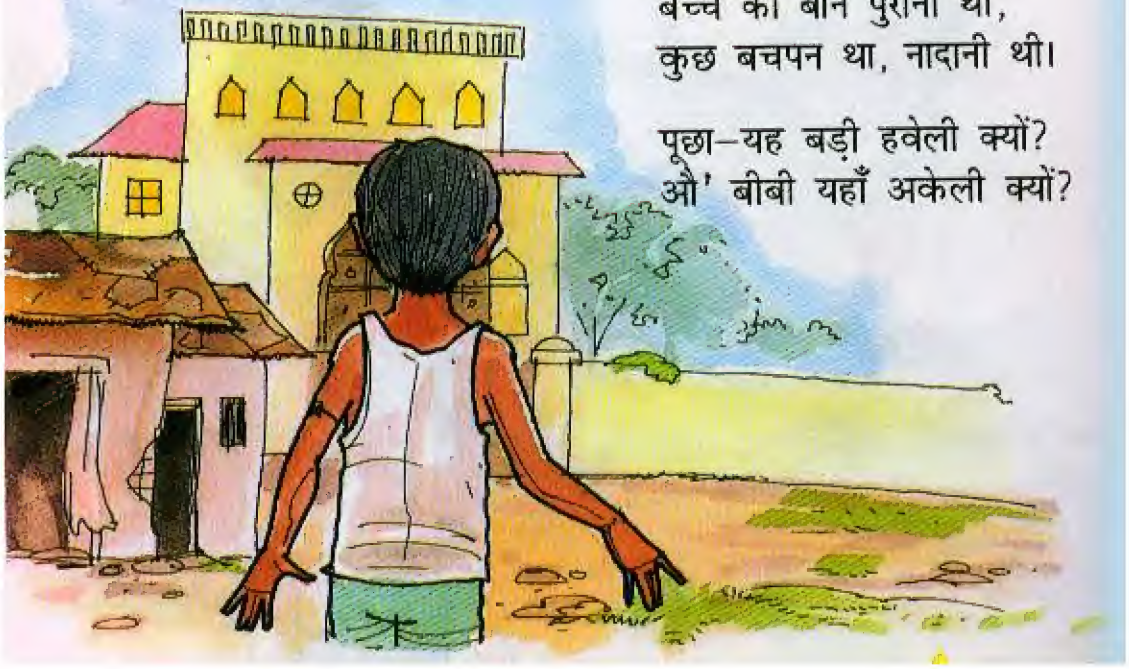

नौकर-चाकर सब हँसते थे,
कुछ तीखे फ़िक़रे कसते थे।

भोले बच्चे! पगलाया क्यों?
हर बात पे करने आया, "क्यों?"

दिन-रात यहाँ हम मरते हैं,
सब काम हम ही तो करते हैं।

रूखा-सूखा जो पाते हैं,
वह खाते, शुकर मनाते हैं।

क़िस्मत में अपनी सैर नहीं,
छुट्टी माँगो तो ख़ैर नहीं।

चलती है कहाँ फ़क़ीरों की?
है दुनिया यहाँ अमीरों की।

यह जग की रीत पुरानी है,
मत पूछो क्यों, नादानी है।

बच्चा था नौकर बीबी का,
फिर देखा मज़ा ग़रीबी का।

दिनभर आवाज़ें पड़ती थीं,
हो देर तो बीबी लड़ती थी।

बावर्ची गाली देता था,
कुछ बदले माली लेता था।

पर आदत बनी रही ज्यों-त्यों,
हर बात पे पूछा करता, "क्यों?"

नित पकते हलुवे-मांदे क्यों?
हम रगड़ें जूठे भांडे क्यों?

बीबी है चुपड़ी खाती क्यों?
औ' सूखी हमें चपाती क्यों?

यह बात जो बीबी सुन पाई,
बच्चे की शामत ले आई।

क्यों हरदम पूछा करता, "क्यों?"
हर बात पे आगे धरता, "क्यों"।

यह माया है शुभ कर्मों की,
मेरे ही दान औ' धर्मों की।

सब पिछला लेना-देना है,
कहीं हलवा कहीं चबेना है।

माँ-बाप को तूने खाया क्यों?
भिखमंगा बनकर आया क्यों?

मुँह छोटा करता बात बड़ी,
सुनती हूँ मैं दिन-रात खड़ी।

इस "क्यों" में आग लगा दूँगी,
फिर पूछा, मार भगा दूँगी।

बच्चा यह सुन चकराया यों,
फिर उसके मुँह पर आया, "क्यों?"

माँ-बाप को मैंने खाया क्यों?
भिखमंगा मुझे बनाया क्यों?

फिर बोला! पाजी, हत्यारा!
कह बीबी ने थप्पड़ मारा।

बच्चा रोया, ललकारा—क्यों?
औ' तुमने हमको मारा क्यों?

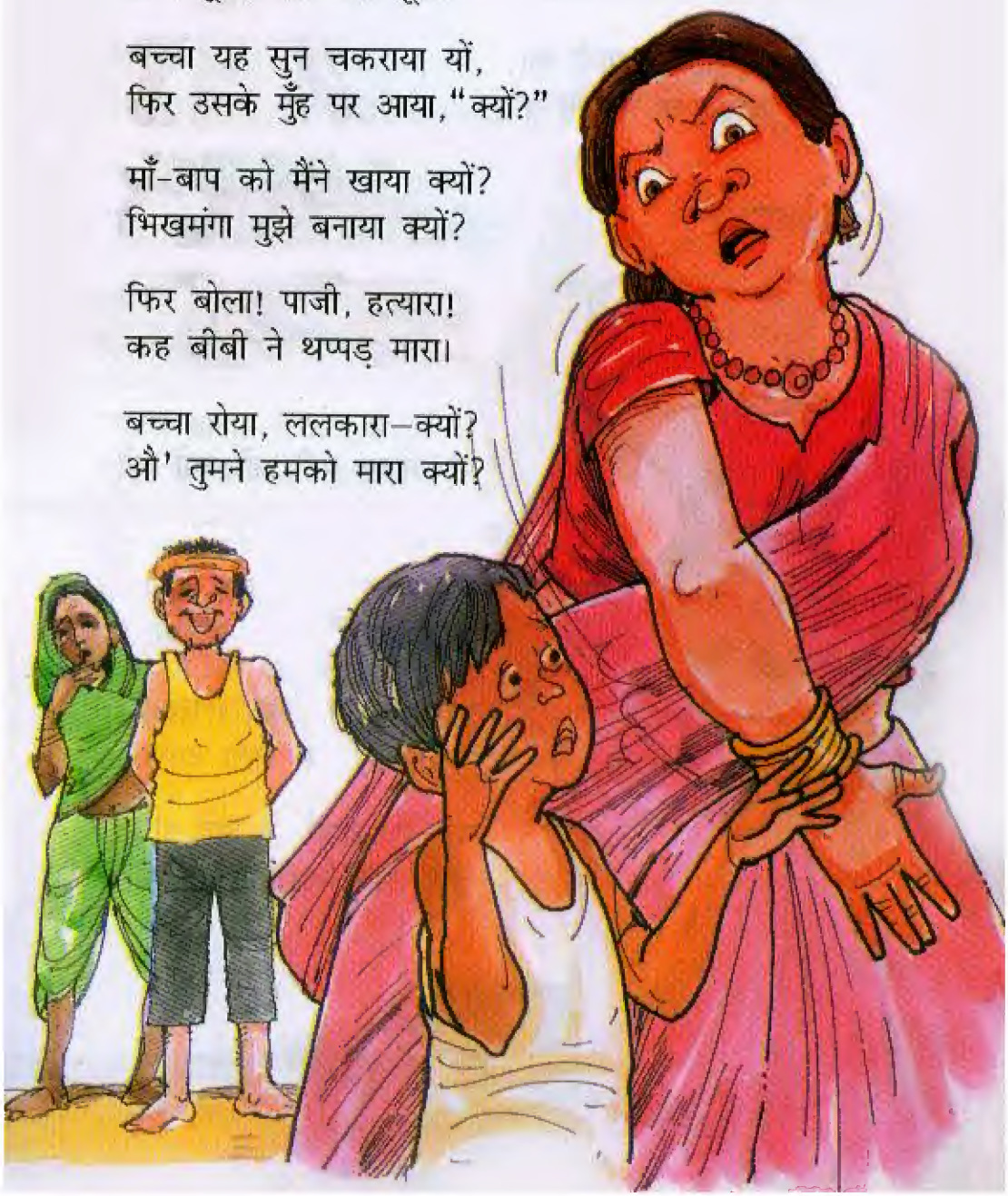

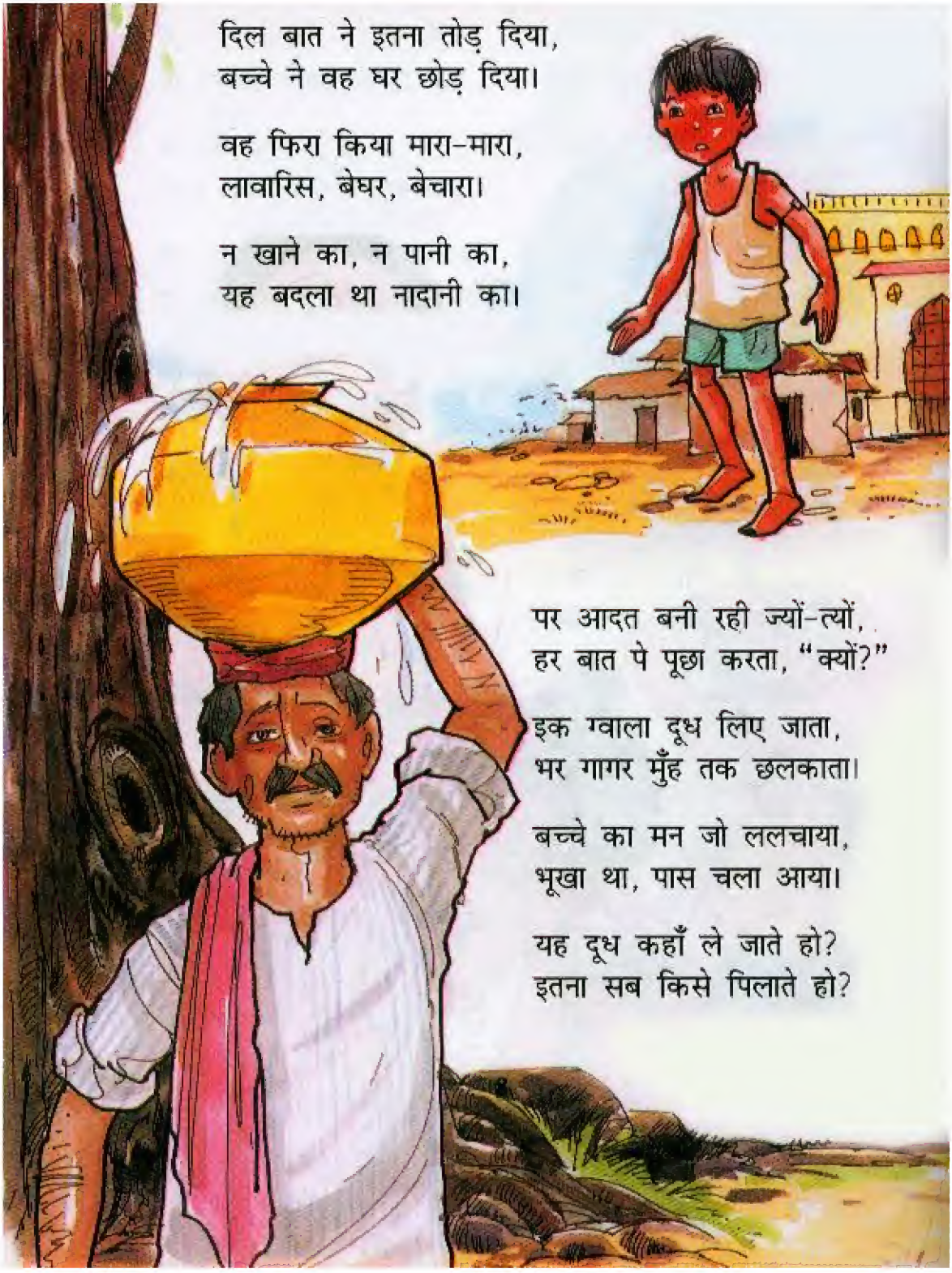

दिल बात ने इतना तोड़ दिया,
बच्चे ने वह घर छोड़ दिया।

वह फिरा किया मारा-मारा,
लावारिस, बेघर, बेचारा।

न खाने का, न पानी का,
यह बदला था नादानी का।

पर आदत बनी रही ज्यों-त्यों,
हर बात पे पूछा करता, "क्यों?"

इक ग्वाला दूध लिए जाता,
भर गागर मुँह तक छलकाता।

बच्चे का मन जो ललचाया,
भूखा था, पास चला आया।

यह दूध कहाँ ले जाते हो?
इतना सब किसे पिलाते हो?

थोड़ा हमको दे जाओ ना!
लो दाम निकालो, आओ ना।

पैसे तो मेरे पास नहीं।
तो दूध की रखो आस नहीं।

जो बच्चा पैसे लाएगा,
वह दूध-दही सब खाएगा।

यह सुन वह सटपटाया यों,
फिर उसके मुँह पर आया, "क्यों?"

दुनिया सब दूध उड़ाए क्यों?
भूखा ग़रीब मर जाए क्यों?

ग्वाला बोला–दीवाना है,
कुछ दुनिया को पहचाना है?

यह जग की रीत पुरानी है,
मत पूछो क्यों, नादानी है।

बच्चे ने मुँह की खाई तो,
पर भूख न मिटने पाई यों।

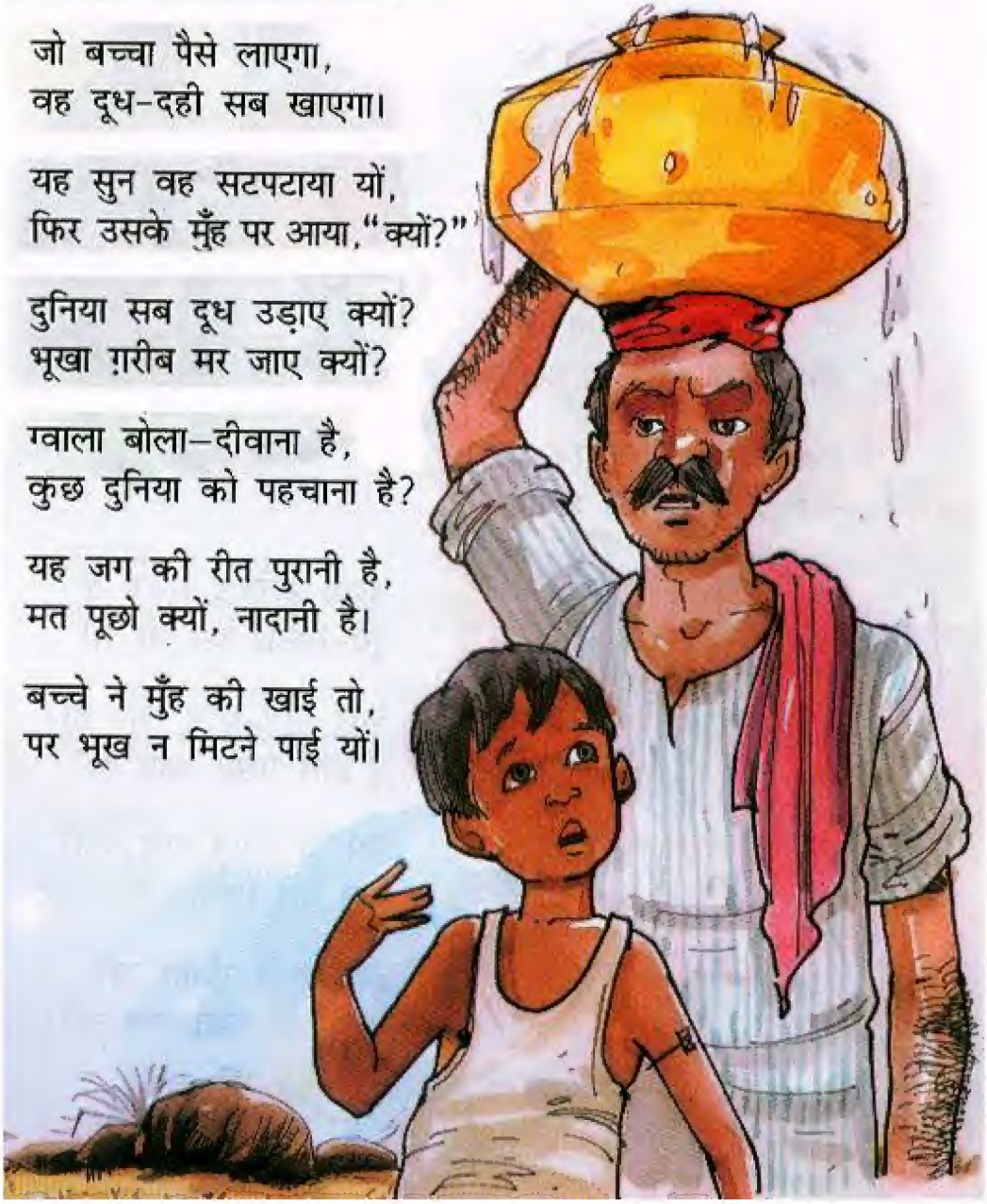

गो थककर बच्चा चूर हुआ,
पर भूख से फिर मजबूर हुआ

थी पास दुकान मिठाई की,
लोगों ने भीड़ लगाई थी।

कोई लड्डू लेकर जाता था,
कोई रबड़ी बैठा खाता था।

क्या सुर्ख़-सुर्ख़ कचौरी थी,
कूंडे में दही फुलौरी थी।

थी भुजिया मेथी आलू की,
और चटनी साथ कचालू की।

बच्चा कुछ पास सरक आया,
न झिझका और न शर्माया।

भइया हलवाई सुनना तो,
पूरी-मिठाई हमें भी दो।

कुछ पैसा-धेला लाए हो?
यूँ हाथ पसारे आए हो?

पैसे तो अपने पास नहीं।
बिन पैसे मिलती घास नहीं।

हम देते हैं ख़ैरात नहीं,
पैसे बिन करते बात नहीं।

दमड़ी औक़ात कमीने* की,
यह सूरत खाने-पीने की!

अब रस्ता अपना नापो ना,
क़िस्मत को खड़े सरापो ना।

हलवाई ने धमकाया ज्यों,
फिर उसके मुँह पर आया, "क्यों?"

कहते हो मुझे कमीना* क्यों?
मेरा ही मुश्किल जीना क्यों?

बच्चा हूँ, मैं बेजान नहीं,
बिन पैसे क्या इंसान नहीं?

हट, हट! क्यों शोर मचाया है,
क्या धरना देने आया है?

नहीं देते, तेरा इजारा है?
क्या माल किसी का मारा है?

अब चटपट चलता बन ज्यों-त्यों,
नहीं रस्ते नाप निकलता क्यों?

जो बच्चा पैसे लाएगा,
लड्डू-पेड़ा सब पाएगा।

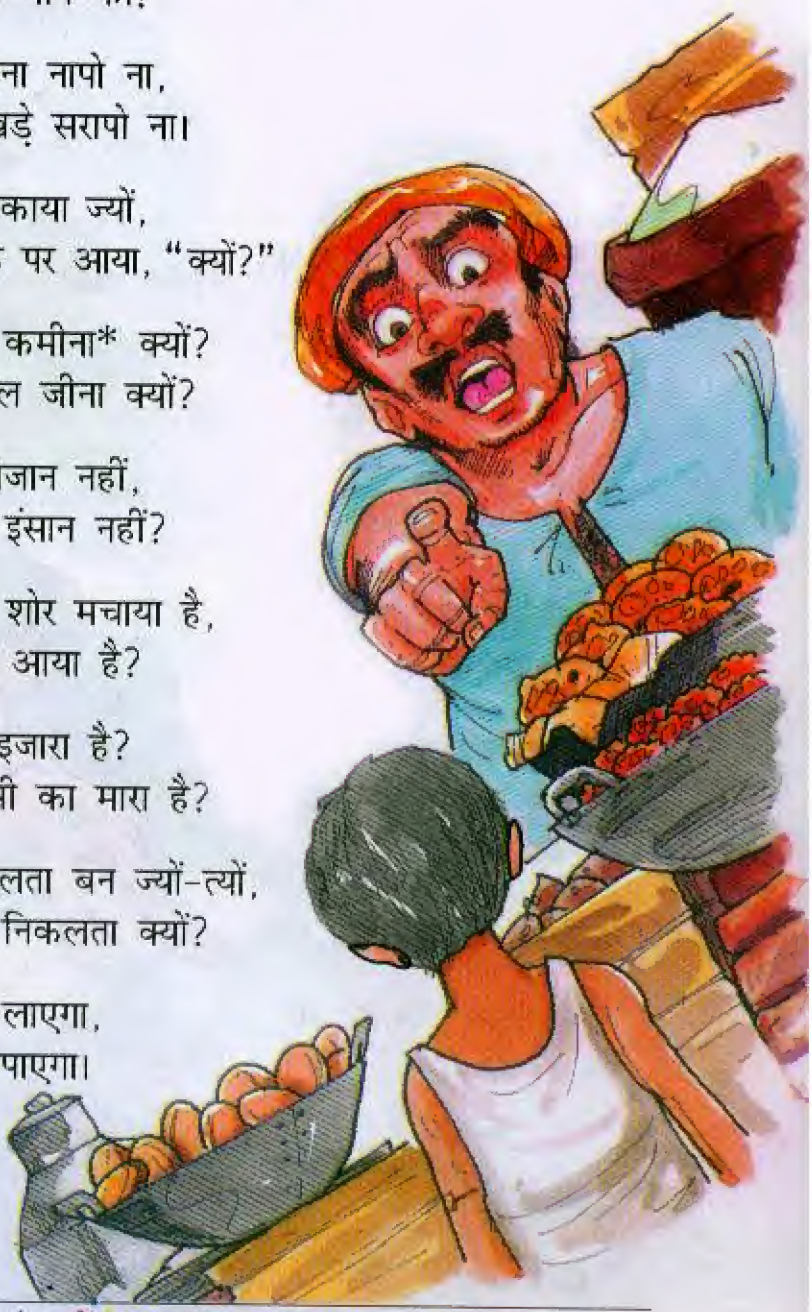

* *ऐसे शब्दों का प्रयोग असंवैधानिक है। समाज के यथार्थ प्रतिबिंबन के लिए लेखक कई बार ऐसे शब्दों का प्रयोग साहित्य में करते रहे हैं, किंतु इसे व्यवहार में नहीं लाया जाना चाहिए।*

यह जग की रीत पुरानी है,
मत पूछो क्यों, नादानी है।

बच्चा थककर बेहाल हुआ,
भूखा, बेचैन, निढाल हुआ।

आगे को क़दम बढ़ाता था,
तो सिर चकराया जाता था।

तरसा था दाने-दाने को,
कुछ बैठ गया सुस्ताने को।

न हिस था ठंडे-पाले का,
न होश उस गंदे नाले का।

थी सरदी खूब कड़ाके की
औ' तपन पेट में फ़ाक़े की।

कुछ दूर को कुत्ता रोता था,
न जाने क्या-कुछ होता था।

दिखता हर तरफ़ अंधेरा था,
कमज़ोरी ने कुछ घेरा था।

आँखें उसकी पथराई थीं,
बेबस बाँहें फैलाई थीं।

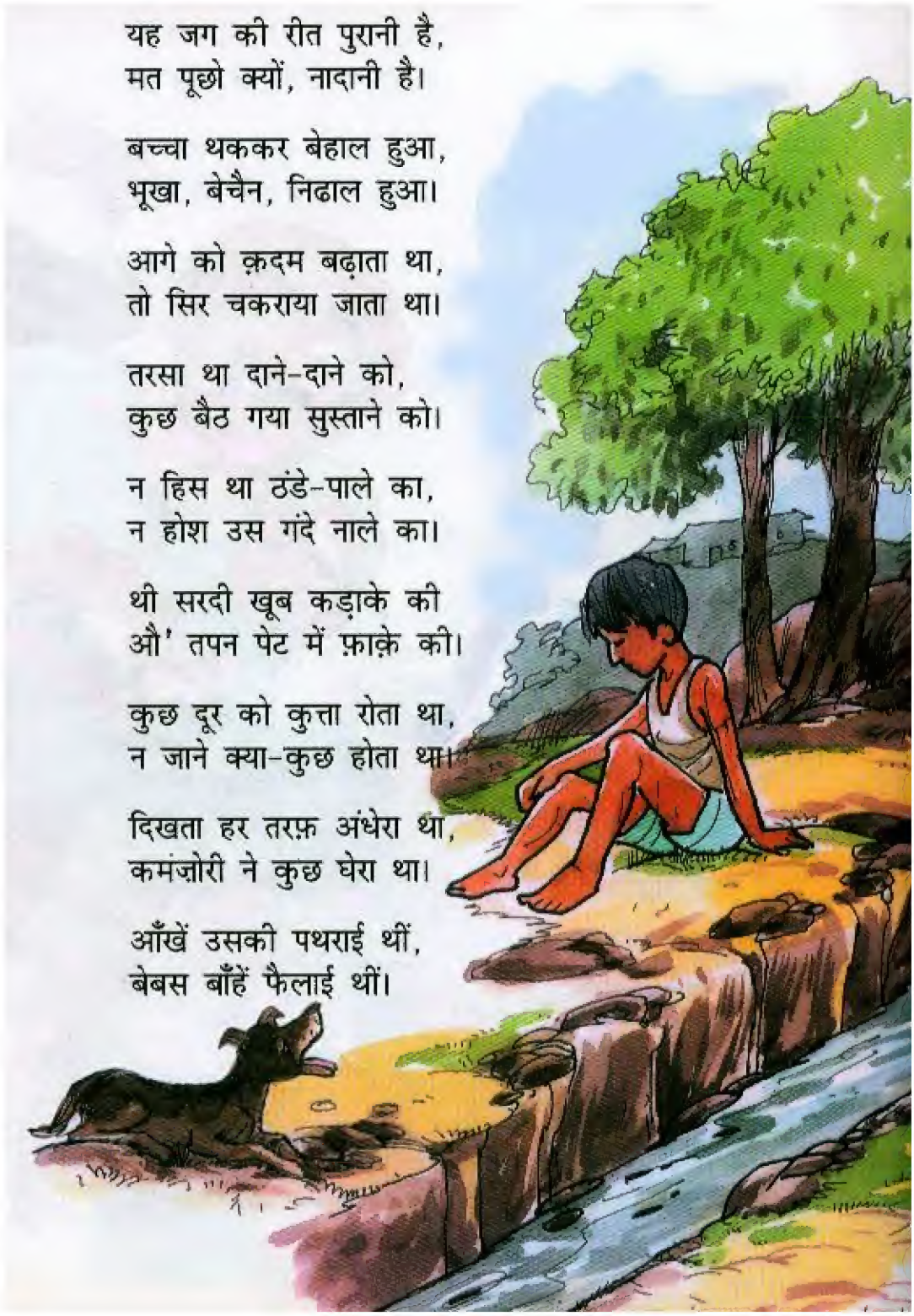

वह ऐसे डूब रहा था ज्यों,
फिर मुँह पर उसके आया, "क्यों?"

आराम से कोई सोता क्यों?
कोई भूखा-नंगा रोता क्यों?

फिर जान पड़ी बेहोशी-सी,
एकदम गुमसुम ख़ामोशी-सी।

देखा कोई बूढ़ा आता है,
इक टाँग से कुछ लँगड़ाता है।

वह पास को आया बच्चे के,
सिर को सहलाया बच्चे के।

क्यों बच्चे सरदी खाता है,
यूँ बैठा ऐंठा जाता है?

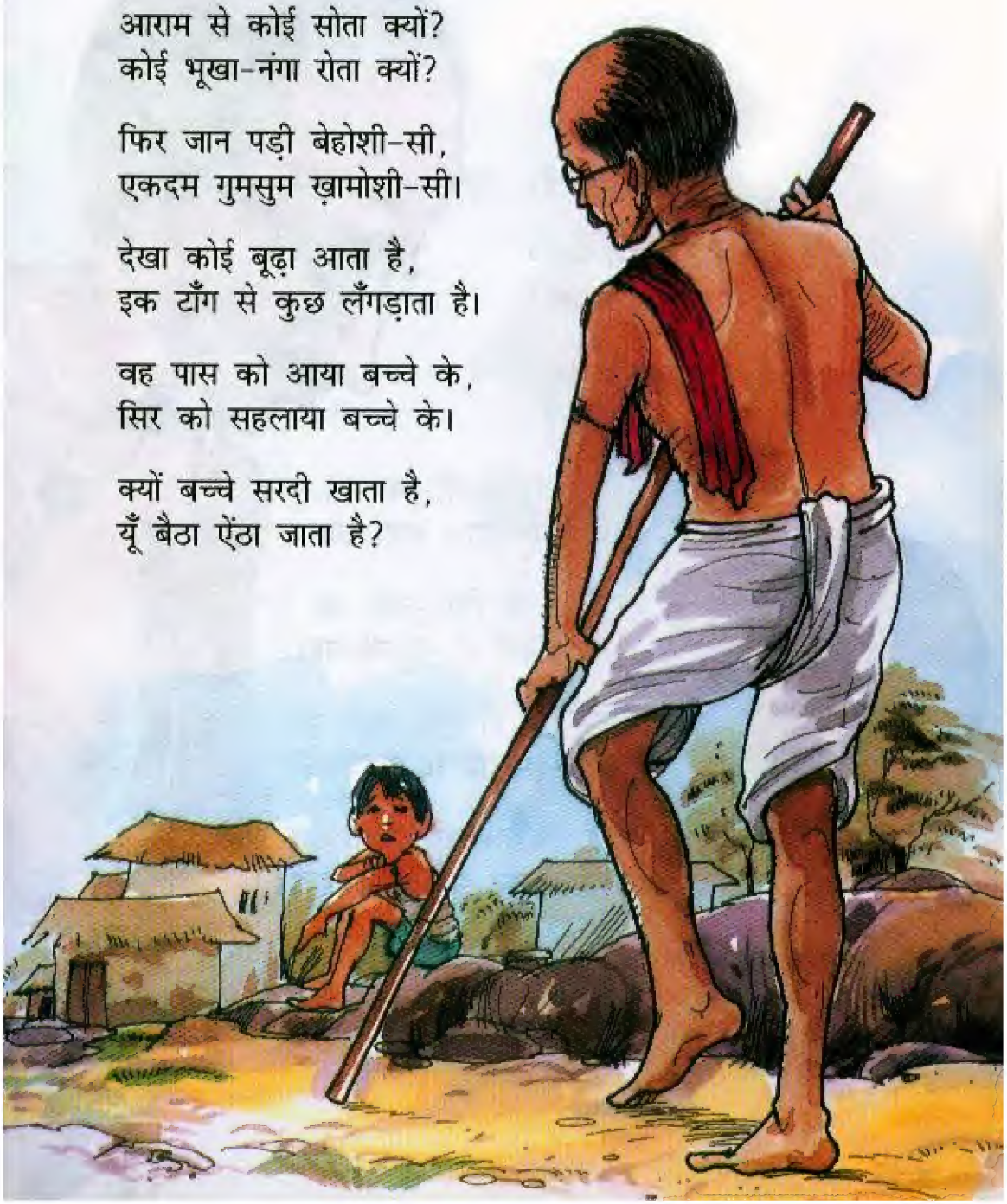

बाबा मेरा घर-बार नहीं,
करने वाला कोई प्यार नहीं।

मैं ये ही पूछा करता—क्यों?
मुझ जैसा भूखा मरता क्यों?

कहते हैं रीत पुरानी है,
मत पूछो क्यों, नादानी है।

पर ऐसी रीत पुरानी क्यों?
मैं पूछूँ—यह नादानी क्यों?

यह तो कुछ नहीं बताते हैं,
उलटे मुझको धमकाते हैं।

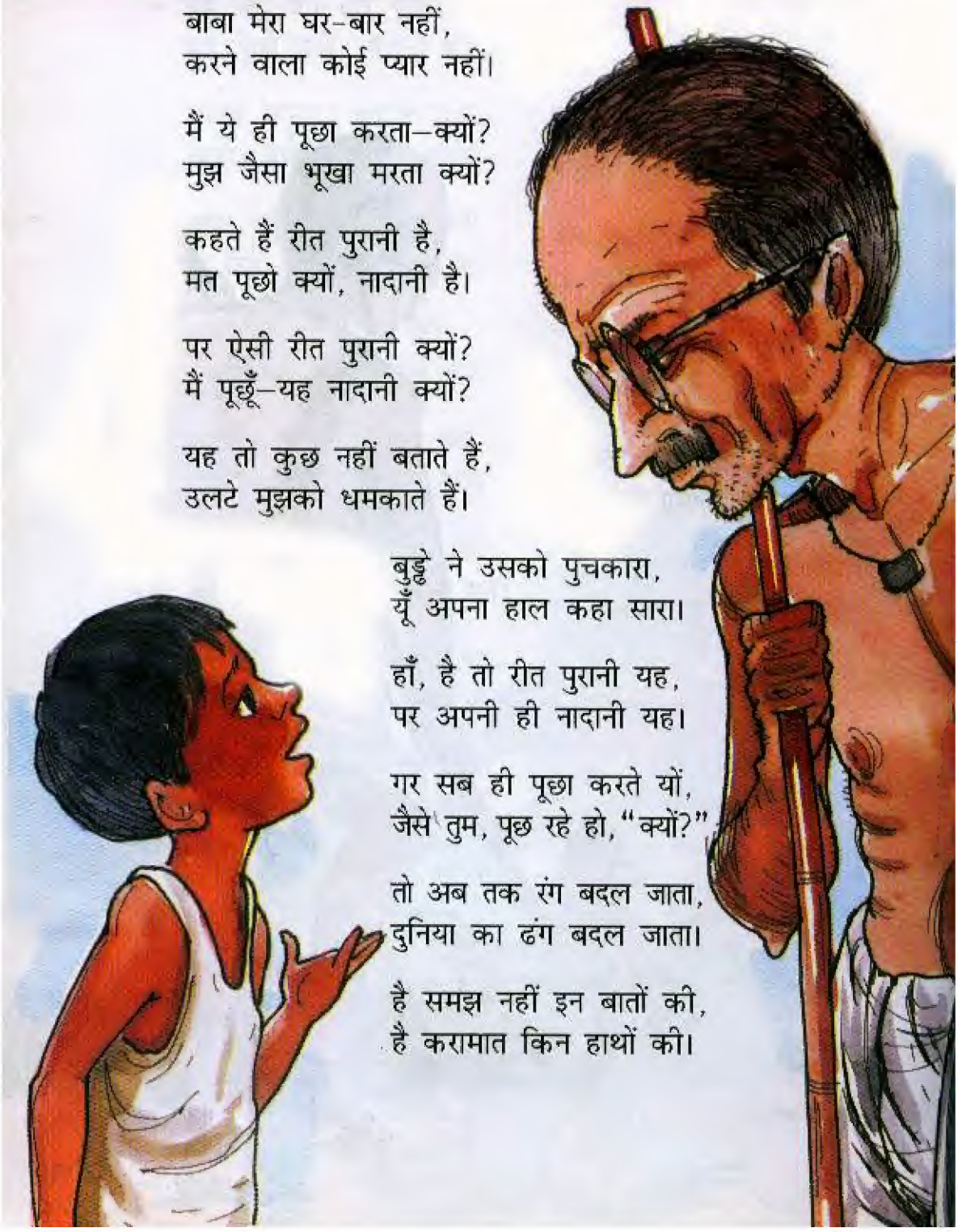

बुड्ढे ने उसको पुचकारा,
यूँ अपना हाल कहा सारा।

हाँ, है तो रीत पुरानी यह,
पर अपनी ही नादानी यह।

गर सब ही पूछा करते यों,
जैसे तुम, पूछ रहे हो, "क्यों?"

तो अब तक रंग बदल जाता,
दुनिया का ढंग बदल जाता।

है समझ नहीं इन बातों की,
है करामात किन हाथों की।

हम ही तो महल उठाते हैं,
हम ही तो अन्न उगाते हैं।

सब काम हम ही तो करते हैं,
फिर उलटे भूखों मरते हैं।

बूढ़ा तो हूँ, बेजान नहीं,
क्या मन में कुछ अरमान नहीं?

मैंने भी कुनबा पाला था,
बरसों तक काम सँभाला था।

जब तक था ज़ोर जवानी का,
मुँह देखा रोटी-पानी का।

यह टाँग जो अपनी टूट गई,
रोटी भी हम से रूठ गई।

कुछ काम नहीं कर पाता हूँ,
यूँ दर-दर ठोकर खाता हूँ।

जोड़ों में होता दर्द बड़ा,
गिर जाता हूँ मैं खड़ा-खड़ा।

न बीबी है, न बच्चा है,
इक सूना-सा घर कच्चा है।

मैं भी सोचा करता हूँ यों,
आहें ग़रीब है भरता क्यों?

कहानी यहाँ अधूरी है,
इसकी हमको मजबूरी है।

कुछ लोग यह अब भी कहते हैं,
जो दूर कहीं पर रहते हैं,

उनको था दिया सुनाई यों,
इक बच्चा पूछ रहा था, "क्यों?"

वह सड़क किनारे बैठा था,
नीला, सरदी से ऐंठा था।

पर दोनों होंठ खुले थे यों,
जैसे वह पूछ रहा था, "क्यों?"

□□

क्यों की रचयिता श्रीमती कमला बक़ाया का जन्म सन् 1900 में और निधन 1973 में हुआ। आज़ादी के आंदोलन के समय में भारत में स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में जो अनेक कल्पनाशील प्रयोग किए गए, उनमें से एक प्रयोग के साथ कमला जी का घनिष्ठ संबंध था। बच्चों को पढ़ाने का प्रशिक्षण उन्हें मारिया मांटेसरी से मिला। मांटेसरी ने शिक्षा को बच्चों के नज़रिए से देखा और एक ऐसी शिक्षण विधि का विकास किया जो बच्चों की सहज जिज्ञासा और उनके सक्रिय अनुभव को ही विकास का आधार बनाने पर बल देती है। कमला बक़ाया की यह लंबी कविता इसी शिक्षण पद्धति की अभिव्यक्ति है। समाज को लेकर जो सवाल हमारे मन में बचपन से आते हैं और जिन्हें हम अक्सर बड़ा होने पर भूल जाते हैं या फिर उनके प्रचलित उत्तरों को ही मान लेते हैं, यह कविता ऐसे ही कुछ सवालों की शृंखला बनाती है। यह शृंखला अंततः एक कहानी का रूप ग्रहण करती है। बच्चों द्वारा पूछे गए सवाल एक ऐसी दुनिया की ओर संकेत करते हैं जो अभी बनाई जानी है और जिसकी तुलना में आज की दुनिया बहुत सीमित जान पड़ती है।

जिज्ञासा और साहस कमला बक़ाया के रचना-संसार के केंद्रीय मूल्य हैं। ये मूल्य हमें प्रकृति से प्राप्त होते हैं लेकिन सामाजिक व्यवस्था धीरे-धीरे उन्हें कमज़ोर बना देती है। *क्यों* शीर्षक कविता को पढ़कर बहुत से बच्चों और शिक्षकों के मन में इन मूल्यों का महत्त्व जागेगा और इस कविता के ज़रिए वे भारत के स्वाधीनता आंदोलन के उस पक्ष से जुड़ेंगे जिसकी विरासत महात्मा गांधी और रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे चिंतकों और गिजूभाई जैसे महान शिक्षकों ने रची। भाषा के स्तर पर भी यह कविता एक नयी ज़मीन बनाती है, हालाँकि इसमें ऐसे कुछ शब्द प्रयोग में आए हैं जिन्हें सामान्य व्यवहार में इस्तेमाल करना शैक्षिक दृष्टि से उचित नहीं है। कमला बक़ाया की विलक्षण शैली में हम भाषा का वह वृहत्तर और लचीला संसार जीवित रूप में पाते हैं जो बाल साहित्य के क्षेत्र में व्यापक उपदेशपरकता के कारण अक्सर दब जाता है।

2053

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING